सरकारी वकील ने कहा, इस पुस्तक में हर तथ्य सही है इसीलिए ये खतरनाक है

1857 की क्रांति के बाद देश मे अंग्रेजों के खिलाफ लोगों का गुस्सा ठंडा नहीं हो पाया था और देश के कोने कोने में अंग्रेजों के खिलाफ लोगों के मन में आग भड़क रही थी। पं. सुंदर लाल उन लोगों में से थे जिन्होंने अंग्रेजों के षड़यत्रों को बेनकाब करने का दुस्साहस कर लोगों को जागरुक करने का अभियान शुरु किया 1857 के पहले स्वाधीनता संग्राम को सैनिक विद्रोह कहकर दबाने के बाद अंग्रेजों ने योजनाबद्ध तरीके से हिंदू और मुस्लिमों में मतभेद पैदा किया। 'फूट डालो और राज करो' की नीति के तहत अंग्रेजों ने बंगाल का दो हिस्सों पूर्वी और पश्चिमी में, विभाजन कर दिया। पंडित सुंदरलाल ने इस सांप्रदायिक विद्रोह के पीछे छिपी अंग्रेजों की कूटनीति तक पहुँचने का प्रयास किया। इसके लिए उन्होंने प्रामाणिक दस्तावेजों तथा विश्व इतिहास का गहन अध्ययन किया ; उनके सामने भारतीय इतिहास के अनेक अनजाने तथ्य खुलते चले गए। इसके बाद वे तीन साल तक क्रांतिकारी बाबू नित्यानंद चटर्जी के घर पर रहकर लेखन और पठन-पाठन के कार्य में लगे रहे। इसीका परिमाम था कि उन्होंने 'भारत में अंग्रेजी राज' के नाम से एक हजार पृष्ठों प्रामाणिक पुस्तक लिख दी।

पत्रकार, इतिहासकार तथा स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, पं. सुंदर लाल मुज़फ्फर नगर में १८८६ में जन्मे थे। खतौली में गंगा नहर के किनारे बिजली और सिंचाई विभाग के कर्मचारी रहते हैं। इनके पिता श्री तोताराम श्रीवास्तव उन दिनों वहां उच्च सरकारी पद पर थे। उनके परिवार में प्राय: सभी लोग अच्छी सरकारी नौकरियों में थे।

मुजफ्फरनगर से हाईस्कूल करने के बाद सुंदरलाल जी प्रयाग के प्रसिद्ध म्योर कॉलेज में पढ़ने गये। वहां क्रांतिकारियों के सम्पर्क रखने के कारण पुलिस उन पर निगाह रखने लगी। गुप्तचर विभाग ने उन्हें भारत की एक शिक्षित जाति में जन्मा आसाधारण क्षमता का युवक कहा, जो समय पड़ने पर तात्या टोपे और नाना फड़नवीस की तरह खतरनाक हो सकता है।

1907 में वाराणसी के शिवाजी महोत्सव में 22 वर्षीय सुन्दर लाल ने ओजस्वी भाषण दिया। यह समाचार पाकर कॉलेज वालों ने उसे छात्रावास से निकाल दिया। इसके बाद भी उन्होंने प्रथम श्रेणी में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। अब तक उनका संबंध लाला लाजपतराय, श्री अरविन्द घोष तथा रासबिहारी बोस जैसे क्रांतिकारियों से हो चुका था। दिल्ली के चांदनी चौक में लार्ड हार्डिंग की शोभायात्रा पर बम फेंकने की योजना में सुंदरलाल जी भी सहभागी थे।

उत्तर प्रदेश में क्रांति के प्रचार हेतु लाला लाजपतराय के साथ सुंदरलाल जी ने भी प्रवास किया। कुछ समय तक उन्होंने सिंगापुर आदि देशों में क्रांतिकारी आंदोलन का प्रचार किया। इसके बाद उनका रुझान पत्रकारिता की ओर हुआ। उन्होंने पंडित सुंदरलाल के नाम से 'कर्मयोगी' पत्र निकाला। इसके बाद

उन्होंने अभ्युदय, स्वराज्य, भविष्य और हिन्दी प्रदीप का भी सम्पादन किया।

ब्रिटिश अधिकारी कहते थे कि पंडित सुन्दर लाल की कलम से शब्द नहीं बम-गोले निकलते हैं। शासन ने जब प्रेस एक्ट की घोषणा की, तो कुछ समय के लिए ये पत्र बंद करने पड़े। इसके बाद वे भगवा वस्त्र पहनकर स्वामी सोमेश्वरानंद के नाम से देश भर में घूमने लगे। इस समय भी क्रांतिकारियों से उनका सम्पर्क निरन्तर बना रहा और वे उनकी योजनाओं में सहायता करते रहे। 1921 से लेकर 1947 तक उन्होंने उन्होंने आठ बार जेल यात्रा की।

इतनी व्यस्तता और लुकाछिपी के बीच उन्होंने अपनी पुस्तक 'भारत में अंग्रेजी राज' प्रकाशित कराई। इसका जर्मन, चीनी तथा भारत की अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ।

1947 में स्वतंत्रता प्रप्ति के बाद गांधी जी के आग्रह पर विस्थापितों की समस्या के समाधान के लिए वे पाकिस्तान गये। 1962-63 में 'इंडियन पीस काउंसिल' के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने कई देशों की यात्रा की। 95 वर्ष की आयु में 8 मई, 1981 को दिल्ली में हृदयगति रुकने से उनका देहांत हुआ। जब कोई उनके दीर्घ जीवन की कामना करता था,तो वे हँसकर कहते थे –

होशो हवास ताबे तबां, सब तो जा चुके
अब हम भी जाने वाले हैं, सामान तो गया।।

1857 के स्वतन्त्रता संग्राम को दबाने के बाद अंग्रेजों ने योजनाबद्ध रूप से हिन्दू और मुस्लिमों में मतभेद पैदा किया। 'फूट डालो और राज करो' की नीति के अंतर्गत उन्होंने बंगाल का विभाजन कर दिया।

पंडित सुंदरलाल ने इस विद्वेष की जड़ तक पहुँचने के लिए प्रामाणिक दस्तावेजों तथा इतिहास का गहन अध्ययन किया। इसके बाद वे तीन साल तक क्रान्तिकारी बाबू नित्यानन्द चटर्जी के घर पर शान्त भाव से काम में लगे रहे। इसी साधना के फलस्वरूप 1,000 पृष्ठों का 'भारत में अंग्रेजी राज' नामक ग्रन्थ तैयार हुआ। पं. सुंदरलाल जी जानते थे कि प्रकाशित होते ही अंग्रेज सरकार इस ग्रंथ को जप्त कर सकती है। इसलिए उन्होंने इसे कई खंडों में बाँटकर अलग-अलग शहरों में छपवाया। इसके बाद सभी तैयार खंडों को प्रयाग में जोड़ा गया और अन्ततः 18 मार्च, 1928 को इसे पस्त के रूप मे प्रकाशित किया गया.

पहले संस्करण की 2,000 प्रतियाँ प्रकाशित हुई और तीन दिन में ही 1,700 प्रतियाँ ग्राहकों तक पहुँचा दी गयीं। शेष 300 प्रतियाँ डाक या रेल द्वारा भेजी जा रही थीं ; पर इसी बीच अंग्रेजों ने 22 मार्च को इसे प्रतिबन्धित घोषित कर इन्हें जब्त कर लिया। जो 1,700 पुस्तकें लोगों के बीच जा चुकी थी उन्हें भी जप्त करने की असफल कोशिश की गई।

इस पुस्तक पर प्रतिबंध को लेकर देश भर में विरोध हुआ। महात्मा गाँधी ने इस पुस्तक के बारे में जी ने भी इसे पढ़कर अपने पत्र 'यंग इंडिया' में विस्तार से लिखा। सत्याग्रह करने वाले इसे जेल ले गये। वहाँ हजारों लोगों ने इसे पढ़ा। इस प्रकार पूरे देश में इसकी चर्चा हो गयी। दूसरी ओर सुन्दरलाल जी प्रतिबन्ध के विरुद्ध न्यायालय में चले गये। 'भारत में अंग्रेजी राज' पर प्रतिबंध के खिलाफ 1928 में

प्रयाग अदालत में सुनवाई चल रही थी. सुंदर लाल के वकील सर तेज नारायण सप्रू ने कहा कि 'इस किताब में एक लाइन भी असत्य नहीं है.' इस पर सरकारी वकील ने यह कहकर लोगों को चौंका दिया कि 'यह किताब इसीलिए अधिक खतरनाक है. कि इसमे एक भी लाईन असत्य नहीं है।'

अदालत ने फिर भी इस पुस्तक पर से प्रतिबंध नही हटाया। इस पर सुन्दरलाल जी ने संयुक्त प्रान्त की सरकार को लिखा। गर्वनर शुरू में तो राजी नहीं हुए ; पर 15 नवम्बर, 1937 को उन्होंने प्रतिबन्ध हटा लिया। इसके बाद अन्य प्रान्तों में भी प्रतिबन्ध हट गया। अब नये संस्करण की तैयारी की गयी। चर्चित पुस्तक होने के कारण अब कई लोग इसे छापना चाहते थे ; पर सुन्दरलाल जी ने कहा कि वे इसे वहीं छपवायेंगे, जहाँ से यह कम दाम में छप सके। ओंकार प्रेस, प्रयाग ने इसे केवल सात रु. मूल्य में छापा। इस संस्करण के छपने से पहले ही 10,000 प्रतियों के आदेश मिल गये थे। देश की आजादी के बाद 1960 में भारत सकार ने इसे प्रकाशित किया।